Indian Journal of Modern Research and Reviews

This Journal is a member of the *'Committee on Publication Ethics'*

Online ISSN:2584-184X

Review Paper

राजस्थान की लोकसंस्कृति में सामाजिक संरचना

डॉ. सोनिया शर्मा

Assistant Professor, Department of History, Gov. Girls College Magra Punjla, Guest Faculty

Corresponding Author: *डॉ. सोनिया शर्मा

DOI: https://doi.org/10.5281/zenodo.19564330

सारांश

यह शोध.पत्र राजस्थान की लोकसंस्कृति और उसकी सामाजिक संरचना के पारस्परिक संबंधों का विश्लेषण करता है। अध्ययन में यह स्पष्ट किया गया है कि संस्कृति और समाज एक.दूसरे के पूरक हैं जहाँ संस्कृति समाज के आचार.विचारए जीवन. शैलीएँ परंपराओं और मूल्यों को दिशा प्रदान करती हैं। राजस्थान की भौगोलिक परिस्थितियोंए ऐतिहासिक पृष्ठभूमि तथा बाहरी प्रभावों से संरक्षित सांस्कृतिक धरोहर ने यहाँ की सामाजिक संरचना को विशिष्ट स्वरूप प्रदान किया है।

इस शोध में भोजन.पद्धतिए वेशभूषाए आभूषणए लोक.मनोरंजनए लोक.साहित्य तथा लोक.उत्सवों के माध्यम से सामाजिक जीवन की संरचना को समझने का प्रयास किया गया है। साथ ही यह भी प्रतिपादित किया गया है कि राजस्थान की लोकसंस्कृति न केवल सांस्कृतिक पहचान का आधार हैए बल्कि सामाजिक एकताए नैतिक मूल्यों और परंपराओं की संरक्षक भी है।

अंततः यह निष्कर्ष निकाला गया है कि राजस्थान की लोकसंस्कृति समाज की आत्मा के रूप में कार्य करती है और सामाजिक संरचना को सुदृढ़ एवं संगठित बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

Manuscript Info.

- ✓ **ISSN No:** 2584- 184X
- ✓ **Received:** 11-09-2025
- ✓ **Accepted:** 28-10-2025
- ✓ **Published:** 30-11-2025
- ✓ **MRR:3(11):** 2025;92-95
- ✓ **©2025, All Rights Reserved.**
- ✓ **Peer Review Process:** Yes
- ✓ **Plagiarism Checked:** Yes

How To Cite this Article

डॉ. सोनिया शर्मा. राजस्थान की लोकसंस्कृति में सामाजिक संरचना, Indian Journal of Modern Research and Review. 2025;3(11):92-95.

मुख्य शब्द: राजस्थान, लोकसंस्कृतियाँ, सामाजिक संरचनाएँ, परंपराएँ, लोक.साहित्यए वेशभूषाए आभूषणए लोक.उत्सवए सामाजिक मूल्यए सांस्कृतिक विरासत

© 2025 डॉ. सोनिया शर्मा. This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution 4.0 International License (CC BY NC ND).https://creativecommons.org/licenses/by/4.0/

प्रस्तावना

संस्कृति और समाज परस्पर एक दूसरे पर निर्भर है। हर समाज की एक संस्कृति होती है, जो समाज के सदस्यो का मार्ग दर्शन करती है। समाज और संस्कृति के बीच संबंध को समझने के लिए हमें यह जानना जरूरी है, कि समाज आखिर है, क्या ? राल्फ लिंटन के अनुसार ''समाज व्यक्तियो का व्यवस्थित समूह है तथा संस्कृति किसी समाज के जिम्मेदार तथा समझदार लोगो की विशेषताओं का समुच्चय अथवा संकलन है।''(1) संस्कृति मनुष्य की वह विशेषता है, जो उसे जानवरो, पशु-पक्षियो आदि वन्य जीवो से पृथक करती है। संस्कृति हमारे दृष्टिकोण, विश्वासो, मूल्यो और रहन-सहन की पद्धतियो का प्रतिनिधित्व करती है। इस प्रकार संस्कृति और समाज आपस में एक-दूसरे से सीधे जुड़े है और उन्हे एक दुसरे से अलग नही किया जा सकता।

राजस्थान का प्रागैतिहासिक मानव भारत के मूल निवासियो की भाँति नदियो के किनारे, पर्वतो की कन्दराओ, तथा वनाच्छादित भूमि भागो में जीवन व्यतीत करता था। राजस्थान की भौगोलिक स्थिति तथा प्राकृतिक बनावट ने यहाँ के जनजीवन तथा संस्कृति को अत्यधिक प्रभावित किया है। अरावली पर्वत श्रृंखला ने यहाँ की मौलिक जनजातियो को बाहरी प्रभाव से इस प्रकार अछुता रखा, कि वे सदियो तक प्राचीन भारतीय परम्परा को सुरक्षित रख सके। यही कारण है, कि प्राचीन भारत के जनजीवन, मान्यताओ तथा विचारो की झलक यदि हम आज भी देखना चाहे तो वे अक्षुण्ण रूप में राजस्थान में देखने को मिलती है। जब विदेशी आक्रमणो से उत्तरी भारत आंक्रात था, राजस्थान इन पर्वतीय दीवारो के कारण उनके कुप्रभावो से बचा रहा। ऐसी परिस्थिति में यहाँ दीर्धकाल तक सुव्यवस्था तथा शांति कायम रही और संस्कृति को निरन्तर प्रक्ष्य मिलता रहा। इसी प्रकार जब कई वीर क्षत्रिय सातवी शताब्दी से राजस्थान मंे विजेता के रूप में आकर बस गये तो इन्होने भी जीवन के कतिपय मूल्यो को जनजाति के संपर्क से आत्मसात् कर लिया और वे न केवल देश के रक्षक अपितु भारतीय संस्कृति के पोषक भी बन गये। अपने अथक परिश्रम से उन्होने भारतीय जीवन के मूल्यों को यथावत् बनाये रखने में अपना सहयोग दिया इतना ही नही इन पर्वतीय श्रृखलाओं में अपने जीवन व धन की सुरक्षा के लिए विशेष रूप से गुजरात तथा मध्यप्रदेश से अनेक समृद्ध परिवार यहाँ आये और उन्होने अपनी सम्पति का सदुपयोग मंदिरो, धर्मशालाओं, के निर्माण में किया। रणकपुर तथा देलवाड़ा के मन्दिर इसी प्रक्रिया का ज्वलंत उदाहरण है।(2) इससे पूर्व भी खुदाई में प्राप्त कालीबंगा तथा आहाड से प्राप्त श्रृंगवान आकृतियो, मुहरो, बर्तनो, धूपदानो आदि से स्पष्ट है, कि राजस्थान का बाहरी सभ्यताओं से घनिष्ट संबंध था और आदान - प्रदान की व्यवस्था ने सांस्कृतिक समन्वय को बढ़ाया।

राजस्थान समाज में भोजन की विधी में अत्यन्त पवित्रता, शुद्धता और संयम का महत्व सदा से रहा है। भोजन से पूर्व स्नान का नियम था। अपने हाथ से पकाया हुआ भोजन विशेष शुद्ध माना जाता था। साधारण लोग पत्तल तथा पीतल व कासे की थालो का प्रयोग करते थे। समृद्ध परिवारो में चांदी तथा सोने से मदे चैकटे भोजन परोसने के लिए रखे जाते थे। वर्तमान समय में भी ग्रामीण भोजन पकाने में मिट्टी के बत्तनो का खुब प्रयोग करते है, जो यहाँ की प्राचीन परम्परा है। मनूची लिखता है, कि राजस्थान में समृद्ध लोग पान खाते थे, जिसमें खैर, चूना, सुपारी के अतिरिक्त सुगन्धित द्रव्य मिलाते थे। उनके अनुसार पान को उपहार स्वरूप देना सम्मान का सूचक समझा जाता था। प्राचीन परम्परा से जुड़ा पान आज भी इतना व्यापक है, कि इसका प्रयोग साधारण से साधारण व्यक्ति भी करता है।(3)

भोजन की भाँति परिधान जीवन क्रम का एक अभिन्न अंग है। विभिन्न क्षेत्रो के निवासियों की वेशभूषा, आभूषण, क्षेत्रीय जलवायु और उपलब्ध पदार्थो से सम्बन्धित होती है तथा संस्कृति की घोतक होती है, क्योकि उसमें एकरूपता तथा मौलिकता के ऐसे तत्व विद्यमान रहते है, कि विदेशी सम्पर्क अथवा आदान-प्रदान की प्रक्रिया तथा सम्भावना बने रहने पर भी वह नष्ट नही होते है। राजस्थान की वेशभूषा का सांस्कृतिक पक्ष इतना प्रबल है, कि सदिया गुजर जाने पर और विदेशी प्रभाव होते हुए भी यहाँ की वेशभूषा अपनी विशेषताओं को स्थिर रखने में सफल रही है। कालीबंगा तथा आहड सभ्यता से सूती वस्त्रो का प्रयोग मिलता है। उत्खनन से प्राप्त खिलौने देखकर पता चलता है, कि जंगली जातियाँ बहुत ही कम वस्त्रो का उपयोग करती थी। ठंड से बचने के लिए पशु चर्म का उपयोग किया जाता था तथा इसी का उपयोग साधु संत भी करते थे। यह प्राचीन परम्परा वर्तमान तक अपना स्थायीत्व बनाये हुई है। गुप्त तथा गुप्तोतर काल की देवताओ की मूर्तियों से समृद्ध परिवार तथा राजा-महाराजाओ के पहनावे का पता चलता है। देलवाडा के मंदिर तथा कीर्ति स्तम्भ की देवताओं की मूर्तियो में कामदार धोती और दोनो किनारो से झुलता हुआ बारीक दुपट्टे का अंकन है, जो वर्तमान में भी राजपरिवार के परिधान के घोतक माने गये है। (4)

कालीबंगा तथा आहड़ आदि स्थलो की खुदाई से प्राप्त मिट्टी के खिलौनो से प्रमाणित होता है, कि उस काल में स्त्रियाँ अधोभाग ढ़कने के लिए साडी या दूपट्टे का प्रयोग करती थी तथा इसे कमर से मेंखला द्वारा बांधा जाता था। मौर्यातर तथा इनके पश्चात् खुदाई में प्राप्त यक्षी की मूर्तिया स्त्री वेषभूषा को स्पष्ट करती है, जिसमें ओढ़नी से सिर ढ़का मिलता है तथा अब साडी घुटने तक पहनी जाने लगी। यही तरीका हमें मथुरा से मिली मूर्तियो में भी देखने को मिलता है। जिसमें स्त्रियो के परिधानो में साड़ी, ओढ़नी, लंहगा, चोली सम्मिलित है। सांस्कृतिक दृष्टि से यह काल बड़े महत्व का रहा है। साडी पहनने तथा ओढ़नी से सिर ढ़कने तथा कपड़ो की सजावट के मूल में स्थानीय तत्व है। इन परिधानो के सांस्कृतिक नाम कुवलयमाला, कथाकोष, में भी मिलते है। चूंदड़ी और लहरिया राजस्थान की प्रमुख साडी रही है, जिसका प्रयोग हर स्तर की महिलाऐ आज भी करती है।(5)

भारत की भाँति राजस्थान में भी प्राचीन काल का मानव सौन्दर्य प्रेमी रहा है। शरीर को सुन्दर तथा आकर्षक बनाने के लिए स्त्रियाँ अनेक प्रकार के आभूषणो का प्रयोग करती थी। कालीबंगा तथा आहड़ युग की स्त्रियाँ चमकीले पत्थरो के आभूषण पहनती थी। कुछ शूंगकालीन मिट्टी की मूर्तियो से ज्ञात होता है, कि स्त्रियाँ हाथ में चूडियाँ, पैरो में खड़वे, गले में लटकन वाले हार पहनती थी। समरादिव्य, कुवलयमाला, आदि साहित्यिक ग्रन्थो से सिर पर बांधे जाने वाले आभूषण को चूडारत्न और गले तथा छाती पर लटकने वाले आभूषणो को 'दूसुरूल्लक', 'पत्रलता', 'कंठिका', 'आमुक्तावली', आदि कहा गया है। मध्यकाल से 20 वी सदी तक अंतकारो के विविध रूप विकसित हो गये। समकालीन साहित्य, मूर्ति और चित्रकला में स्त्रियों के आभूषणो का सुन्दर चित्रण हुआ है। ओसिया, नागदा, देलवाड़ा, कुभलगढ़ आदि स्थानो से प्राप्त मूर्तियो में कुंडल, हार, बाजूबन्ध, नूपूर पहने हुए है। ज्यो-ज्यो समय बदलता गया इन आभूषणों के रूप और नाम भी स्थानीय विशेषता लेते गऐ। अंलकारो का बाहुल्य तत्कालीन समय की कला के उत्कृष्ट स्थिति एवं उस समय के समाज की सौदर्यता की रूचि पर प्रकाश डालता है

© 2025 डॉ. सोनिया शर्मा. This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution 4.0 International License (CC BY NC ND).https://creativecommons.org/licenses/by/4.0/

और आर्थिक वैभव का परिज्ञान भी उनके माध्यम से होता है, क्योंकि आभूषणो को हर स्तर की महिलाऐ पहनती थी चाहे वह राजपरिवार की हो या साधारण स्तर की अंतर था तो केवल धातु का।(6)

प्राचीन भारतीय समाज में आमोद-प्रमोद का विशिष्ट स्थान रहा है। उसी प्रकार राजस्थान के विभिन्न क्षेत्रो की खुदाई से यहाँ के निवासियों के आमोद-प्रमोद की जानकारी भी मिलती है। कालीबगा आहड़ तथा रंगमहल, आदि के उत्खनन से पता चलता है, कि मिट्टी के खिलौने जैसे, चकरी, गाड़ी, गुडिया, गोलिया, बच्चो के खेल के साधन थे। गुप्तोत्तर काल तक आते-आते मनोरंजन के सम्बन्ध में उपमितिभाव, प्रपचकथा, रत्नावली आदि ग्रन्थो से समय-समय पर विभिन्न उत्सवो के आयोजन का पता चलता है, जिसमें नाचना, गाना, झुलना आदि मनोरजन के साधन थे। विविध आयोजनों में गीत-संगीत को प्रधानता दी जाती थी, जिसमें स्त्री व पुरूष समान रूप से भाग लेते थे। मध्यकाल तक आते-आते समाज में अनेक प्रकार की मनोविनोद सम्बन्धी क्रियाओ का प्रचलन आरम्भ हो गया, जिसमें मल्लयुद्ध, मुक्केबाजी, घुड़दौड़ आदि लोकप्रिय थे। जिनको स्त्री-पुरूष बड़ी संख्या में एकत्रित होकर देखते थे। हाथीयो की लड़ाई, सुअर की लड़ाई, शेर का शिकार करना राजा-महाराजाओं के मनोरंजन के प्रमुख साधन थे। शेर का शिकार होने पर बड़ी दावतों का आयोजन किया जाता था। रानीयाँ भी शिकार पर जाती थी।

मुगलो के सम्पर्क से कई क्रीडाओ का स्थानीय क्रीडाओ में समावेश हुआ, जिसमें कबुतर बाजी, मुर्गबाजी, तीतरबाजी आदि में निम्न वर्ग का समाज अधिक रूचि लेता था। पतंगबाजी मध्यकाल में अति लोकप्रिय हो गई थी। शाहआलम प्रथम के समय से इसको लोकप्रियता प्राप्त हुई। राजस्थान में ''आकाश - दीपको'' को उड़ाने की प्रथा थी, जो मनोरंजन का धार्मिक तथा सामाजिक पक्ष था। मुगल सम्पर्क से पतंग उड़ाने में कई परिवर्तन आये और जयपुर तो इस शौक का गढ़ बन गया।(7) व्यवासयिक लोग नगर से नगर तथा गाँव से गाँव जाकर जागरण का आयोजन करते थे। घरो में एक स्थान पर बैठकर खेले जाने वाले खेलो में शतरंज अभिजात्य वर्ग में अधिक लोकप्रिय था। जोधपुर के भागवत पुराण के चित्रो में कृष्ण के माध्यम से कई लौकिक खेलो का चित्रण किया गया है। एक चित्र में कृष्ण तथा उसके साथी छीपते है और एक ग्वाला उन्हे ढूढ़ता है। वही दूसरे चित्र में एक ग्वाला आँखे मुदवाता है और दूसरे छीपते है फिर वह उन्हे ढूढ़ते है। इसी तरह एक अन्य चित्र में एक ग्वाला घोड़ा बनता है और उस पर दूसरा ग्वाला बैठकर गेद से ठप्पा लगाता है।(8) ये स्थानीय तत्व वर्तमान में भी अपना अस्तित्व बनाये हुए है।

राजस्थान का लोक साहित्य भारतीय लोककला की एक विशिष्ट सम्प्रदा है। राजस्थानी भाषा की मारवाड़ी, दूदांड़ी, मालवी, मेवाती, बागड़ी बोलियो में रचित साहित्य इस देश के कोटि-कोटि निवासियों के कंठो में प्रतिष्ठित है। समय-समय पर यह लिपीबद्ध होता रहा, जिसका प्रमाण राजस्थानी साहित्य की प्राचीन सहस्त्र पाण्डूलिपीयाँ है। लोक साहित्य में रूचि रखने वाले अनेक विद्वानो, अध्येताओ और साहित्य प्रेमियो ने राजस्थानी साहित्य की विविध विधाओ की रचनाओ के संकलन प्रकाशित कर उनका लोक-वार्ताशास्त्र की आधुनिक दृष्टि से समीक्षण और आंकलन का कार्य भी किया। इसी के फलस्वरूप राजस्थानी लोक साहित्य की विधाओ यथा लोकगीत, लोककथाओ, लोक-गाथाओं (पवाडे), लोक-नाट्यो (ख्याल) कहावतो, पहेलियों, तन्त्र-मन्त्र आदि का वैज्ञानिक विश्लेषण की विवेचना आज हमें उपलब्ध है। लोक साहित्य से न केवल लोक जीवन प्रतिबिम्बित होता है, अपितु इससे प्रदेश का भूगोल, आदिकाल का इतिहास, प्रकृति, सामाजिक रीतिरिवाज, धर्म, देवी-देवता, लोक आस्थाये, अन्ध-विश्वास सभी का एक निर्मल दर्पण प्रस्तुत होता है।(9)

सामाजिक जीवन और उससे संबंधित संस्थाओ मंे लोकोत्सवो का महत्वपूर्ण स्थान है। स्थानीय संस्कृति की अभिव्यक्ति लोकोत्सवो में स्पष्ट रूप से देखी जा सकती है, क्योंकि उनके साथ प्राचीन परम्पराऐ तथा विचारधाराऐ जूडी रहती है। ये विचारधाराऐ और परम्पराऐ धार्मिक, ऐतिहासिक तथा सामाजिक महत्व रखती है। जब-जब लोकोत्सवो का आयोजन होता है तो देश या प्रान्त के सांस्कृतिक पहलू के एक स्वरूप की अभिव्यक्ति होती है जिसमें प्रत्येक तबके का व्यक्ति सम्मिलित रूप से बड़े उत्साह से भाग लेता है। इन उत्सवो, ऋतुओ तथा विशेष अवसरो को ऐसा समायोजित किया जाता है कि जनभावना में नैसर्गिकता दिखाई पड़ती है। राजस्थान में प्राकृतिक विविधता होने से लोकोत्सवो का भी एक विचित्र स्वरूप बन जाता है। अलग-अलग मौसम में अलग-अलग स्थानो में वेशभूषा, नाच-गाना तथा प्रदर्शन अपनी विशेषताओ को लेकर इस तरह से रचे जाते है, कि उत्सवो में नऐ जीवन का संचार हो जाता है। इन अवसरो पर गाये जाने वाले लोकगीतो अथवा कही जाने वाली लोकवाताओ में धार्मिक निष्ठा अथवा ऐतिहासिक तथ्य छीपे पड़े है जो राजस्थानी संस्कृति का घोतक है। राजस्थान के लोकोत्सवो यथा:- गणगौर, तीज, मकरसंक्राति, जन्माष्ठमी, बसन्तपचंमी, शरद पूर्णिमा, आदि सभी उत्सवो में धर्मनिष्ठा तथा लोकजीवन की विविधता को इस प्रकार समावेशित किया गया है, कि भारतीय संस्कृति का निराकार स्वरूप साकार दिखाई पड़ता है। साथ ही सांस्कृतिक दृष्टि से आदिकाल से वर्तमान युग तक निरन्तर चली आ रही जनमान्यताऐ तथा परम्पराऐ आज भी विधमान है।(10)

राजस्थान की लोकसंस्कृति यहाँ के समाज की आत्मा है। यह केवल परम्पराओ तथा रीति-रिवाजो तक ही सीमित नही है बल्कि लोगो के जीवन-दर्शन, आचार-विचार, रहन-सहन और सामाजिक मूल्यो को गहराई से प्रभावित करती है। राजस्थान जैसे विविधतापूर्ण प्रदेश में लोकसंस्कृति समाज को जोड़ने वाली सशक्त कड़ी है। इस प्रकार राजस्थान के समाज में लोकसंस्कृति का महत्व अत्यंत व्यापक और गहरा है। यह न केवल सांस्कृतिक धरोवर है बल्कि सामाजिक समरसता, नैतिक मूल्यों और हमारी पहचान की संरक्षक भी है।

सन्दर्भ सूची:-

1. अब्राहम, एम.एफ. *कंटेम्पररी सोशियोलॉजी: एन इंट्रोडक्शन टू कॉन्सेप्ट्स एंड थ्योरी.* ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, दिल्ली; 2006. पृ. 2।
2. एर्स्किन, के.डी. *राजपूताना गजेटियर.* वेस्टर्न राजपूताना स्टेट्स रेजीडेन्सी एंड बीकानेर एजेंसी, गुड़गाँव; 1992. पृ. 311। शर्मा, गोपीनाथ. *राजस्थान का सांस्कृतिक इतिहास.* राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर; 1989. पृ. 8–10।
3. मनूची. *स्टोरिया दी मोगर्न,* भाग-1; पृ. 63। शर्मा, जी.एन. *मध्यकालीन राजस्थान में सामाजिक जीवन (1500–1800 ई.).* आगरा; 1968. पृ. 162–164।
4. शर्मा, जी.एन. *पश्चिमी भारत में समाज. कल्पनुव: भारतीय संग्रहालय पत्रिका,* भाग-12; पृ. 69–71।
5. *हकीकत बही संख्या 3* (वि.सं. 1835–40 / 1778–83 ई.). जोधपुर रिकॉर्ड, राजस्थान राज्य अभिलेखागार, बीकानेर।

© 2025 डॉ. सोनिया शर्मा. This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution 4.0 International License (CC BY NC ND).https://creativecommons.org/licenses/by/4.0/

बाकीदास री ख्यात, संपादक: नरोत्तमलाल स्वामी. जोधपुर: प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान; 1956. पृ. 96, 304।
शर्मा, गोपीनाथ. *राजस्थान का सांस्कृतिक इतिहास.* पृ. 79–83।
जयसिंह, नीरज एवं शर्मा, भगवती लाल. *राजस्थान की सांस्कृतिक परम्परा.* राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर; 2021. पृ. 66–67।

6. शर्मा, दशरथ. *राजस्थान थ्रू द एजेज*, खण्ड-1. बीकानेर; 2014. पृ. 37, 462, 465।
शर्मा, गोपीनाथ. *राजस्थान का सांस्कृतिक इतिहास.* पृ. 85।
शर्मा, जी.एन. *मध्यकालीन राजस्थान में सामाजिक जीवन.* पृ. 154–156।
7. व्यास, रामप्रसाद. *आधुनिक राजस्थान का बृहत् इतिहास*, खण्ड-1. राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर; 2016. पृ. 380।
बाकीदास री ख्यात. पृ. 292।
8. शर्मा, गोपीनाथ. *राजस्थान का सांस्कृतिक इतिहास.* पृ. 85–88।
9. प्रसाद, दिनेश्वर. *लोक संस्कृति और समाज.* लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद; 1973. पृ. 104–107।
जयसिंह, नीरज एवं शर्मा, भगवती लाल. *पूर्वोक्त ग्रंथ.* पृ. 195–205।
पाण्डेय, राजकुमार. *लोक संस्कृति और समाज.* राजकमल प्रकाशन, दिल्ली; 2016. पृ. 10–11।
10. गुप्ता, के.एस. एवं ओझा, जे.के. *राजस्थान का राजनीतिक तथा सांस्कृतिक इतिहास.* राजस्थानी ग्रन्थागार, जोधपुर; 1986. पृ. 17।
शर्मा, गोपीनाथ. *राजस्थान का सांस्कृतिक इतिहास.* पृ. 64–68।

Creative Commons (CC) License

This article is an open-access article distributed under the terms and conditions of the Creative Commons Attribution (CC BY 4.0) license. This license permits unrestricted use, distribution, and reproduction in any medium, provided the original author and source are credited.

© 2025 डॉ. सोनिया शर्मा. This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution 4.0 International License (CC BY NC ND).https://creativecommons.org/licenses/by/4.0/